Journal of SPHERES
Vol. 1. **Issue** 1, August 2026. Pp. 1-15
ISSN: Applied For

Journal homepage: https://spublication.in/journals/index.php/spheres

Article

The Concept of Equality and Inequality in Islam: A Comprehensive Study of the Political Representation and Social Justice of Pasmanda Muslims in Western Uttar Pradesh (2014–2024)

Iqra Afreen

1. Dr. B. R. Ambedkar University Delhi, Delhi, India.

*Corresponding Author:
iqra.afreen2000@gmail.com

Article History

Received: 18-05-2026
Revised: 26-06-2026
Accepted: 05-07-2026
Published: 23-08-2026

DOI: 10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

Abstract:

This research presents a comprehensive study of the socio-economic status, political representation, and access to social justice of Pasmanda Muslims engaged in traditional caste-based occupations across ten districts of Western Uttar Pradesh—Meerut, Muzaffarnagar, Saharanpur, Amroha, Bijnor, Shamli, Baghpat, Bulandshahr, Aligarh, and Moradabad. The study focuses on ten Pasmanda communities: Ansari, Manihar, Kunjra, Kasai, Nat, Dhobi, Teli, Rangrez, Halalkhor, and Chik. Contrary to Islam's foundational teachings of equality and brotherhood, caste-based discrimination and hierarchical structures persist among Indian Muslims. Based on a sample of 200 respondents, the study found that 52% of families have a monthly income between ₹5,000-10,000, 30% are illiterate, 69% have experienced caste-based discrimination, and 86% believe that political parties prioritize higher-caste Muslims (Ashrafs). The Nat community is the most deprived—60% live in kutcha houses, 80% lack toilets, and 100% have no access to schools or healthcare facilities. Despite government schemes during 2014-2024, only 32% have benefited and 64% are unaware of reservation policies. The study highlights the intersectional impact of caste, religion, and socio-economic status, emphasizing the urgent need for policy interventions, community organization, and social awareness. The findings reveal that the marginalization of Pasmanda Muslims is structural and systemic, requiring constitutional reforms, educational reservations, economic empowerment, and enhanced political representation to address their multi-dimensional deprivation.

Keywords: Pasmanda Muslims, Caste Discrimination, Social Justice, Political Representation, Intersectionality, Socio-Economic Deprivation, Western Uttar Pradesh

Journal of SPHERES is a peer-reviewed open-access journal. © 2026.The Author(s). This is an open-access article published by Synergy Publication under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0). This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author(s) and source are credited. The Author(s) retain copyright of their work. Synergy Publication is granted a non-exclusive right to publish the article and to identify itself as the original publisher. For more information, *See http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/.*

OPEN ACCESS

Journal of SPHERES
Vol. 1. **Issue** 1, August 2026. Pp. 1-15
ISSN: Applied For

Journal homepage: https://spublication.in/journals/index.php/spheres

Article

इस्लाम में समानता और असमानता की अवधारणा: पश्चिमी उत्तर प्रदेश के पसमांदा मुसलमानों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व एवं सामाजिक न्याय का एक विस्तृत अध्ययन (2014-2024)

इक़रा आफरीन

1. डॉ. बी. आर. अंबेडकर विश्वविद्यालय दिल्ली, दिल्ली, इंडिया।

*करेस्पोंडिंग ऑथर : iqra.afreen2000@gmail.com

Article History

Received:	18-05-2026
Revised:	26-06-2026
Accepted:	05-07-2026
Published:	23-08-2026

DOI: 10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

सारांश:

यह शोध पश्चिमी उत्तर प्रदेश के दस जिलों—मेरठ, मुज़फ्फरनगर, सहारनपुर, अमरोहा, बिजनौर, शामली, बागपत, बुलंदशहर, अलीगढ़ तथा मुरादाबाद—में पारंपरिक जाति-आधारित व्यवसायों में संलग्न पसमांदा मुसलमानों (अंसारी, मनिहार, कुंजड़ा, कसाई, नट, धोबी, तेली, रंगरेज, हलालखोर, चिक) की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक न्याय की उपलब्धता का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है। इस्लाम की समानता और भाईचारे की मूल शिक्षाओं के विपरीत, भारतीय मुसलमानों के बीच जाति-आधारित भेदभाव और पदानुक्रमिक संरचना व्याप्त है। 200 प्रतिवादियों पर आधारित इस अध्ययन में पाया गया कि 52% परिवारों की मासिक आय ₹5,000-10,000 के बीच है, 30% निरक्षर हैं, 69% ने जातिगत भेदभाव का अनुभव किया है, और 86% का मानना है कि राजनीतिक दल उच्च जाति के मुसलमानों (अशरफ) को प्राथमिकता देते हैं। नट समुदाय सबसे अधिक वंचित है—60% कच्चे मकानों में रहते हैं, 80% के पास शौचालय नहीं हैं, और 100% को स्कूल या स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच नहीं है। 2014-2024 के दशक में सरकारी योजनाओं के बावजूद, केवल 32% को लाभ मिला और 64% आरक्षण के प्रति अज्ञान हैं। अध्ययन जाति, धर्म और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अंतर्विभाजक प्रभाव को रेखांकित करता है और नीतिगत हस्तक्षेप, सामुदायिक संगठन तथा सामाजिक जागरूकता की तत्काल आवश्यकता पर बल देता है। शोध निष्कर्ष बताते हैं कि पसमांदा मुसलमानों की वंचना संरचनात्मक और प्रणालीगत है, जिसे समाप्त करने के लिए संवैधानिक सुधारों, शैक्षिक आरक्षण, आर्थिक सशक्तिकरण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द: पसमांदा मुसलमान, जातिगत भेदभाव, सामाजिक न्याय, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, अंतर्विभाजकता, सामाजिक-आर्थिक वंचना, पश्चिमी उत्तर प्रदेश

1. प्रस्तावना

1.1. इस्लाम में समानता की अवधारणा

इस्लाम स्वयं को एक ऐसे धर्म के रूप में प्रस्तुत करता है जो सभी मनुष्यों को अल्लाह के समक्ष समान मानता है। क़ुरआन (49:13) कहता है:

"हे मनुष्यों! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया तथा तुम्हें जातियों और कबीलों में इसलिए बाँटा ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो; निस्संदेह अल्लाह के निकट सबसे सम्मानित वही है जो सबसे अधिक परहेज़गार है।"

पैग़म्बर मुहम्मद के विदाई भाषण (हज्जतुल वदा) में स्पष्ट कहा गया:

"किसी अरब को गैर-अरब पर, किसी गोरे को काले पर, किसी काले को गोरे पर कोई श्रेष्ठता प्राप्त नहीं है, सिवाय तक़वा (धार्मिकता) के।" (Sahih Muslim, Book of Hajj, Farewell Sermon)

यह इस्लामी आदर्श सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा के सिद्धांतों पर आधारित है। असग़र अली इंजीनियर (1990) के अनुसार इस्लाम की सामाजिक दृष्टि मूलतः न्याय, समानता और मानवीय गरिमा पर आधारित है। फ़ज़लुर रहमान (1980) का मत है कि इस्लामी समाज में सामाजिक असमानता का कोई धार्मिक औचित्य नहीं है; जो भी असमानताएँ विकसित हुईं वे ऐतिहासिक और राजनीतिक परिस्थितियों का परिणाम थीं।

Journal of SPHERES is a peer-reviewed open-access journal. © 2026.The Author(s). This is an open-access article published by Synergy Publication under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0). This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author(s) and source are credited. The Author(s) retain copyright of their work. Synergy Publication is granted a non-exclusive right to publish the article and to identify itself as the original publisher. For more information, *See http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/.*

OPEN ACCESS

1.2. भारतीय संदर्भ में इस्लामी समानता

भारतीय संदर्भ में यह आदर्श सामाजिक व्यवहार में पूर्णतः प्रतिबिंबित नहीं हुआ। मध्यकालीन सामाजिक संरचनाओं तथा स्थानीय जातिगत प्रभावों के कारण भारतीय मुसलमानों में भी अशराफ, अजलाफ और अरज़ल जैसी श्रेणियाँ विकसित हुईं (Ahmad, 1978)।

ग़ौस अंसारी (1960) ने अपने अग्रणी शोध में भारतीय मुसलमानों को तीन वर्गों में विभाजित किया:

- अशरफ: उच्च जाति के मुसलमान (सय्यद, शेख, मुगल, पठान)
- अजलाफ: मध्यम जाति (जाट, गुर्जर, राजपूत मुसलमान)
- अर्ज़ल: निम्नतम जाति (भंगी, मेहतर, हलालखोर, धोबी, नट, चिक) (Ansari, 1960)

यह वर्गीकरण इस्लाम के समतावादी सिद्धांतों से सीधे विरोधाभास रखता है। अली अनवर (2005) ने इसे "भारतीय मुस्लिम समाज का छिपा हुआ जातिवाद" कहा है और तर्क दिया कि लगभग 80-85% भारतीय मुसलमान सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों से आते हैं, किन्तु धार्मिक और राजनीतिक नेतृत्व पर अशराफ वर्ग का प्रभुत्व बना रहा है।

1.3. पसमांदा: परिभाषा और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

"पसमांदा" फ़ारसी शब्द है जिसका अर्थ है—"पीछे छूटे हुए" या "उत्पीड़ित।" यह आंदोलन विशेष रूप से बिहार में अली अनवर के नेतृत्व में संगठित हुआ और बाद में उत्तर प्रदेश सहित पूरे उत्तर भारत में फैल गया (Anwar, 2005)।

खालिद अनीस अंसारी (2023) के अनुसार "पसमांदा" केवल एक सामाजिक श्रेणी नहीं बल्कि भारतीय मुस्लिम समाज के भीतर जाति-विरोधी राजनीतिक चेतना का प्रतीक है। सिकंद (2007) ने पहचाना कि भारतीय मुसलमानों के बीच हिंदू जाति व्यवस्था के पहलू, जैसे पदानुक्रमित सामाजिक समूह क्रम, अंतर्विवाह, और वंशानुगत व्यवसाय विद्यमान हैं। पसमांदा मुसलमानों में विभिन्न जाति समूह शामिल हैं, जैसे अंसारी (बुनकर), मनिहार (आभूषण निर्माता), कुंजड़ा (सब्जी व्यापारी), कसाई (माँस व्यापारी), नट (कलाबाज/पशु व्यापारी), धोबी (कपड़े धोने वाले), तेली (तेल निष्कर्षक), रंगरेज (रंगाई/छपाई करने वाले), हलालखोर (स्वच्छता कार्यकर्ता), और चिक (छोटे जानवरों के कसाई) जो जाति-आधारित व्यवसायों में लगे हैं।

1.4. शोध की प्रासंगिकता और महत्व

2014 के बाद भारतीय राजनीति में पसमांदा मुसलमानों की चर्चा राष्ट्रीय विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बनी। विशेषतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश, जहाँ बड़ी संख्या में पसमांदा समुदाय निवास करते हैं, इस विमर्श का प्रमुख क्षेत्र बनकर उभरा (Ali & Singh, 2024)।

सच्चर समिति (2005) ने पाया कि मुस्लिम समुदाय रोजगार और शिक्षा के मामले में अनुसूचित जाति की तुलना में काफी पीछे है। रंगनाथ मिश्र आयोग (2007) ने भी मुस्लिम पिछड़े वर्गों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को अत्यंत कमजोर बताया था। रियाज़ एवं रहीमान (2022) ने अपने अध्ययन में पसमांदा मुसलमानों की दोहरी भेद्यता (double vulnerability) को रेखांकित किया—एक तो मुस्लिम समुदाय के भीतर उनकी जाति के कारण और दूसरी सरकारी नीतियों में उनके धार्मिक अल्पसंख्यक होने के कारण।

यह शोध निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण है:

1. पश्चिमी उत्तर प्रदेश के पसमांदा मुसलमानों पर केन्द्रित पहला व्यापक अध्ययन
2. 2014-2024 के राजनीतिक परिवर्तनों का विश्लेषण
3. जाति, धर्म और राजनीति के अंतर्विभाजक प्रभावों का अध्ययन
4. सामाजिक न्याय के वास्तविक क्रियान्वयन का मूल्यांकन

2. साहित्य समीक्षा

2.1. भारतीय मुसलमानों में जातिगत स्तरीकरण

इम्तियाज़ अहमद (1978) ने भारतीय मुस्लिम समाज को सामाजिक स्तरीकरण वाला समाज बताते हुए लिखा कि जातिगत पहचानें मुस्लिम समुदाय में भी सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करती हैं। उन्होंने तर्क दिया कि मुस्लिम समाज में जाति केवल एक सांस्कृतिक अवशेष नहीं बल्कि सामाजिक संबंधों को निर्धारित करने वाला एक सक्रिय कारक है।

गेल ऑम्वेट तथा क्रिस्टोफ़ जैफ़रलो (2003) ने भी यह तर्क दिया कि भारतीय मुसलमानों में जाति केवल सांस्कृतिक अवशेष नहीं बल्कि सत्ता, संसाधनों और प्रतिनिधित्व से जुड़ा प्रश्न है। जैफ़रलो (2003) ने अपनी पुस्तक "India's Silent Revolution" में उत्तर भारतीय राजनीति में निम्न जातियों के उदय का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया और दिखाया कि किस प्रकार पिछड़े वर्गों की राजनीति ने मुस्लिम समाज के भीतर भी नई सामाजिक चेतना उत्पन्न की।

ज़ारिना भट्टी (1973) ने उत्तर प्रदेश के कसौली में अपने अध्ययन में पाया कि मुसलमान अशरफ और गैर-अशरफ समूहों में विभाजित हैं, जो आगे चार और अठारह जाति समूहों में विभाजित हैं। उन्होंने पाया कि अशरफ जातियों (सय्यद, शेख, मुगल, पठान) के बीच अंतर-भोजन (commensality) की अनुमति थी, लेकिन निम्न जाति के मुसलमानों के साथ भोजन की अनुमति नहीं थी। भट्टी के अनुसार, नट (जो मृत जानवरों की खाल उतारते हैं और ढोल बनाते हैं) सबसे नीचे रखे गए थे, धोबी (कपड़े धोने वाले) नट से ऊपर थे, और जुलाहा (बुनकर) तथा दर्जी (दर्ज़ी) धोबी से ऊपर थे।

सिद्दीकी (1979) ने बंगाल के मुसलमानों के अपने अध्ययन में दिखाया कि किस प्रकार दफाली (जो लालबेगियों के लिए पुजारी का काम करते हैं) लालबेगियों (मुस्लिम भंगी) से भोजन या पानी स्वीकार नहीं करते। उन्होंने यह भी पाया कि विवाह के मामले में ये जाति समूह अधिकतर अंतर्विवाही (endogamous) हैं, लेकिन कभी-कभी हाइपरगेमी (hypergamy) की अनुमति है, जहाँ निम्न जाति की महिला का सय्यद या शेख से विवाह होने पर संतानों को 'सय्यदजादा' कहा जाता है जो अपने पिता की जाति स्थिति के बराबर नहीं माने जाते।

माइंस (1972) ने तमिल मुसलमानों के बीच सामाजिक स्तरीकरण का अध्ययन किया और पाया कि केरल जैसे कुछ क्षेत्रों में जाति-समान प्रथाएँ अपेक्षाकृत कम स्पष्ट हैं, जहाँ मजबूत समतावादी परंपराएँ और सुधार आंदोलन इन भेदभावपूर्ण प्रथाओं को चुनौती देते हैं। उन्होंने तर्क दिया कि क्षेत्रीय विविधताएँ स्थानीय इतिहास, सांस्कृतिक परंपराओं, और प्रमुख हिंदू समाज के साथ एकीकरण की सीमा से प्रभावित हैं।

2.2. पसमांदा मुसलमानों का हाशिएकरण

सिकंद (2001, 2004, 2007) ने पसमांदा मुसलमानों के हाशिएकरण पर व्यापक शोध किया। उन्होंने पहचाना कि भारतीय मुसलमानों के बीच हिंदू जाति व्यवस्था के पहलू, जैसे पदानुक्रमित सामाजिक समूह क्रम, अंतर्विवाह, और वंशानुगत व्यवसाय विद्यमान हैं। सिकंद (2001) ने अखिल भारतीय पिछड़ा मुस्लिम मोर्चा के उदय का विश्लेषण करते हुए

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

दिखाया कि किस प्रकार पसमांदा मुसलमानों ने अपनी राजनीतिक चेतना को संगठित किया।

अली अनवर (2005) ने अपनी पुस्तक "मसावत की जंग" में लिखा कि मुस्लिम समुदाय के भीतर एक विशिष्ट समूह पिछड़ेपन और उपेक्षा के कारण लगातार दुर्व्यवहार का शिकार है। उन्होंने हिंदू दलितों और मुस्लिम दलितों के बीच तुलना करते हुए लिखा कि दोनों ने लगभग समान सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक स्थिति के साथ यात्रा शुरू की, लेकिन स्वतंत्रता के बाद हिंदू दलितों को अनुसूचित जाति का दर्जा मिला, जबकि पसमांदा मुसलमानों को अल्लाह की रहमत पर छोड़ दिया गया। अनवर (2005) ने मुस्लिम संस्थानों के प्रबंधन निकायों का सांख्यिकीय अवलोकन प्रदान किया जिसमें दिखाया गया कि किस प्रकार उच्च जाति के मुसलमान अखिल भारतीय मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, इमारत-ए-शरिया, वक्फ बोर्ड, दारुल उलूम देवबंद जैसे मदरसों, मस्जिदों, दरगाहों, अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों, और हज समिति, अल्पसंख्यक आयोग, उर्दू अकादमी, मौलाना आज़ाद फाउंडेशन जैसी राज्य-गठित और सहायता प्राप्त निकायों पर अपना नियंत्रण बनाए रखते हैं।

सच्चर समिति (2005) ने पाया कि मुस्लिम समुदाय की स्थिति रोजगार और कार्य जनसंख्या के मामले में अनुसूचित जाति की जनसंख्या की तुलना में काफी कम है। रिपोर्ट ने मुसलमानों के बीच शिक्षा से संबंधित चिंताओं को उजागर किया। 2001 में राष्ट्रीय औसत साक्षरता (65.1%) और मुस्लिम समुदाय की साक्षरता दर (59.1%) के बीच महत्वपूर्ण अंतर था। 2011 की जनगणना में साक्षरता दर में सभी धार्मिक समुदायों में 9.4% की वृद्धि दर्ज की गई, लेकिन फिर भी मुसलमानों में 7 वर्ष से अधिक आयु के निरक्षरों का प्रतिशत सबसे अधिक (42.72%) था। देशपांडे और कुलकर्णी (2008) ने भारत में बदलती शैक्षिक असमानताओं का विश्लेषण करते हुए पाया कि सकारात्मक कार्रवाई के बावजूद, मुस्लिम समुदाय शैक्षिक मापदंडों पर पिछड़ा रहा।

आलम (2003) ने भारतीय मुसलमानों के लोकतंत्रीकरण पर अपने चिंतन में तर्क दिया कि उच्च जाति के मुस्लिम नेतृत्व ने सचेत प्रयास किए हैं कि मुस्लिम राजनीति को बाबरी मस्जिद, शाह बानो केस जैसे कुछ सांस्कृतिक और भावनात्मक मुद्दों के इर्द-गिर्द घुमाए रखा जाए, जिससे समुदाय के भीतर आंतरिक लोकतंत्रीकरण के प्रयासों को हाशिए पर रखा जा सके। उन्होंने दिखाया कि किस प्रकार अशरफ मुसलमानों ने समुदाय की एक सतही छवि एक सामूहिक सांप्रदायिक एकात्मक इकाई के रूप में बनाई रखी।

फज़ल (2013) ने जाति, धर्म और लिंग के अंतर्विभाजक पहचानों का विश्लेषण करते हुए पसमांदा मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर प्रकाश डाला। उन्होंने पाया कि पसमांदा मुस्लिम महिलाएँ तिहरे उत्पीड़न का सामना करती हैं—एक तो मुस्लिम समुदाय के भीतर उनकी जाति के कारण, दूसरा प्रमुख हिंदू समाज में मुसलमान होने के कारण, और तीसरा उनके लिंग के कारण। उन्होंने तर्क दिया कि अंतर्विभाजक दृष्टिकोण पसमांदा मुस्लिम महिलाओं के जीवन के अनुभवों की जटिलता को समझने के लिए आवश्यक है।

2.3. आरक्षण और सकारात्मक कार्रवाई

काका कालेलकर आयोग (1955) ने मुस्लिम आबादी के भीतर कई समुदायों के अस्तित्व को नोट किया जो अपने समाज में सामाजिक भेदभाव के शिकार हैं और सुझाव दिया कि इन समुदायों को नौकरी में आरक्षण के लिए पात्र होना चाहिए। हालाँकि, सिफारिशें कभी लागू नहीं हुईं। मंडल आयोग (1980) ने 82 मुस्लिम समूहों को पिछड़ा घोषित किया और उन्हें हिंदुओं के बीच अन्य पिछड़ी जातियों (ओबीसी) के समान आर्थिक और शैक्षिक अवसरों की सिफारिश की।

हालाँकि, ये आयोग जाति के सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करने में विफल रहे, जो हिंदू समुदाय की तरह ही इन जाति समूहों के वंचना में समान भूमिका निभा रहा था। उदाहरण के लिए, मुस्लिम समुदाय में हलालखोर (सफाई कर्मी) की स्थिति हिंदू समुदाय में भंगी के समान है; हालाँकि, भंगी को अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता प्राप्त है, जबकि पूर्व को केवल अन्य पिछड़ा वर्ग माना जाता है, हालाँकि दोनों समूह एक ही प्रकार की छुआछूत के अधीन हैं (Deshpande & Bapna, 2008)।

देशपांडे और बापना (2008) ने मुस्लिम और ईसाई समुदायों में दलितों की स्थिति पर एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें दिखाया गया कि अनुसूचित जाति का दर्जा देने से इनकार करना अनुच्छेद 14 (कानून के समक्ष समानता), अनुच्छेद 15 (धर्म के आधार पर भेदभाव का निषेध), और अनुच्छेद 25 (किसी भी धर्म को मानने और उसका पालन करने की स्वतंत्रता) का उल्लंघन है। उन्होंने गरीबी, औसत उपभोग स्तर, व्यवसाय श्रेणियों और शिक्षा के स्तरों पर डेटा प्रस्तुत किया जिसमें दिखाया गया कि दलित मुसलमान इन सभी क्षेत्रों में पिछड़े हैं और अनुसूचित जाति आरक्षण में शामिल किए जाने का एक उत्तम मामला बनाते हैं।

थोराट और न्यूमैन (2012) ने "Blocked by Caste: Economic Discrimination in Modern India" में आधुनिक भारत में आर्थिक भेदभाव का विश्लेषण किया और पाया कि जाति-आधारित भेदभाव न केवल सामाजिक क्षेत्र में बल्कि आर्थिक क्षेत्र में भी व्याप्त है। उन्होंने तर्क दिया कि पसमांदा मुसलमानों को जाति के आधार पर आर्थिक भेदभाव का सामना करना पड़ता है, जो उनकी गरीबी और वंचना को कायम रखता है।

कुमार (2023) ने अनुसूचित जाति कोटे से पसमांदा मुसलमानों और दलित ईसाइयों के बहिष्कार का विश्लेषण करते हुए तर्क दिया कि यह बहिष्कार संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन है और इसे तत्काल समाप्त किया जाना चाहिए। उन्होंने दिखाया कि किस प्रकार यह बहिष्कार पसमांदा मुसलमानों को उनके हिंदू समकक्षों की तुलना में वंचित रखता है, जो एससी आरक्षण के पात्र हैं।

2.4. 2014-2024: पसमांदा राजनीति का नया दशक

2014 के बाद भारतीय राजनीति में "पसमांदा" शब्द का प्रयोग उल्लेखनीय रूप से बढ़ा। भारतीय जनता पार्टी ने इस समुदाय तक राजनीतिक पहुँच बनाने का प्रयास किया, जबकि समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी और कांग्रेस ने भी विभिन्न स्तरों पर इन्हें प्रतिनिधित्व देने की कोशिश की।

मंजूर अली एवं शिल्प शिखा सिंह (2024) के अनुसार उत्तर प्रदेश में पसमांदा नेतृत्व का एक नया वर्ग उभरा है, जिसने विकास और राजनीतिक भागीदारी को प्राथमिकता दी। उन्होंने तर्क दिया कि 2014-2024 के दशक में पसमांदा विमर्श राष्ट्रीय राजनीति में अधिक प्रमुख हुआ, लेकिन केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है; वास्तविक सामाजिक न्याय के लिए शिक्षा, आर्थिक अवसर, राजनीतिक भागीदारी, स्थानीय नेतृत्व और संस्थागत सुधारों को समान महत्व देना होगा।

क्रिस्टोफ़ जैफ़रलो (2003) के अनुसार भारतीय लोकतंत्र में पिछड़े वर्गों की राजनीति ने मुस्लिम समाज के भीतर भी नई सामाजिक चेतना उत्पन्न की। उन्होंने दिखाया कि 1990 के दशक में मंडल आयोग के कार्यान्वयन के बाद पसमांदा राजनीति को गति मिली, और 2000 के दशक में सच्चर समिति और रंगनाथ मिश्र आयोग की सिफारिशों के बाद यह आंदोलन और मजबूत हुआ।

मुजतबा (2017) ने उत्तर प्रदेश में मुस्लिम 'अन्य पिछड़ा वर्ग' के आंदोलन का विश्लेषण करते हुए पाया कि पसमांदा मुसलमानों ने अपनी राजनीतिक चेतना को संगठित करने के लिए विभिन्न संगठनों का गठन किया, जैसे अखिल भारतीय मुस्लिम ओबीसी संगठन (महाराष्ट्र) जिसका नेतृत्व शब्बीर अहमद अंसारी कर रहे हैं, अखिल भारतीय पिछड़ा मुस्लिम मोर्चा (बिहार) जिसका नेतृत्व इजाज अली कर रहे हैं, और अखिल भारतीय पसमांदा मुस्लिम महाज़ (बिहार और यूपी) जिसका नेतृत्व मुख्तार अली अंसारी और पूर्व में अली अनवर अंसारी कर रहे हैं। इन संगठनों ने पिछले तीन दशकों में मुस्लिम अभिजात वर्ग की सामाजिक और राजनीतिक आधिपत्य को चुनौती दी है और राष्ट्रीय साथ ही मुस्लिम समुदाय की आंतरिक राजनीति में पसमांदा मुसलमानों के लिए एक स्थान बनाया है।

आलम (2022) ने अनुसूचित जाति की स्थिति के लिए पसमांदा आंदोलन के संघर्ष का विश्लेषण करते हुए तर्क दिया कि पसमांदा मुसलमानों को अनुसूचित जाति के दायरे में लाने के लिए संवैधानिक संशोधन की तत्काल आवश्यकता है। उन्होंने दिखाया कि किस प्रकार यह संघर्ष पिछले कुछ दशकों में तेज हुआ है और पसमांदा संगठनों ने इस मुद्दे को राष्ट्रीय स्तर पर उठाया है।

2.5. अंतर्विभाजकता सिद्धांत

अंतर्विभाजकता का सिद्धांत, जिसे किम्बर्ले क्रेंशॉ (1989) ने प्रतिपादित किया, यह स्वीकार करता है कि व्यक्ति और समूह अपनी अतिव्यापी सामाजिक पहचानों—जैसे जाति, धर्म, लिंग, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, आदि—के आधार पर एकाधिक, अंतर्विभाजक उत्पीड़न और नुकसान का अनुभव कर सकते हैं। क्रेंशॉ (1989) ने तर्क दिया कि पारंपरिक नारीवादी और विरोधी-जातिवादी ढाँचे अक्सर उन लोगों के अनुभवों को अनदेखा करते हैं जो एक साथ कई पहचानों के आधार पर भेदभाव का सामना करते हैं।

चो, क्रेंशॉ और मैक्कल (2013) ने अंतर्विभाजकता सिद्धांत को आगे विकसित किया और तर्क दिया कि अंतर्विभाजकता न केवल एक सैद्धांतिक ढाँचा है बल्कि अनुसंधान और सामाजिक न्याय के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण भी है। उन्होंने दिखाया कि किस प्रकार अंतर्विभाजकता विश्लेषण उन जटिल तरीकों को प्रकट करता है जिनमें सत्ता की प्रणालियाँ एक-दूसरे को काटती हैं और हाशिएकरण को कायम रखती हैं।

यह अध्ययन पसमांदा मुसलमानों के सामने आने वाले यौगिक नुकसानों को समझने के लिए अंतर्विभाजकता का उपयोग करता है—जाति, धर्म और सामाजिक-आर्थिक स्थिति का संयुक्त प्रभाव। जसपाल (2011) ने इस्लाम में जाति, धर्म और लिंग के अंतर्विभाजन का विश्लेषण करते हुए पाया कि पसमांदा मुसलमानों की पहचान एक जटिल अंतर्विभाजक जाल में फँसी हुई है जो उनके हाशिएकरण को कायम रखती है।

हाशिएकरण और सामाजिक बहिष्कार के सिद्धांत (सेन, 2000) उन प्रक्रियाओं और तंत्रों की जाँच करते हैं जिनके द्वारा कुछ व्यक्ति या समूह संसाधनों, अवसरों और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में भागीदारी से व्यवस्थित रूप से वंचित होते हैं। सेन (2000) ने तर्क दिया कि सामाजिक बहिष्कार न केवल आर्थिक वंचना का परिणाम है बल्कि यह स्वयं वंचना का एक कारण भी है। ये सिद्धांत पसमांदा मुसलमानों द्वारा शिक्षा, रोजगार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, और सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता के अन्य मार्गों तक पहुँचने में सामना की जाने वाली प्रणालीगत बाधाओं पर प्रकाश डालते हैं।

3. शोध पद्धति

3.1. शोध उद्देश्य

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जाति-आधारित व्यवसायों में संलग्न पसमांदा मुसलमानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

1. उनकी व्यावसायिक प्रथाओं और सामाजिक संबंधों पर जाति के प्रभाव को समझना।
2. पसमांदा मुसलमानों के आर्थिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए मौजूदा नीतियों और कार्यक्रमों की जाँच करना।
3. 2014-2024 के दशक में राजनीतिक प्रतिनिधित्व में आए परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
4. पसमांदा मुसलमानों के व्यावसायिक जुड़ाव के पुनर्अभिविन्यास की संभावनाओं की पहचान करना।

3.2. अध्ययन का दायरा और सीमाएँ

भौगोलिक दायरा: अध्ययन पश्चिमी उत्तर प्रदेश के दस जिलों—मेरठ, मुज़फ्फरनगर, सहारनपुर, अमरोहा, बिजनौर, शामली, बागपत, बुलंदशहर, अलीगढ़ तथा मुरादाबाद—तक सीमित है। ये जिले इसलिए चुने गए क्योंकि यहाँ पसमांदा मुस्लिम आबादी की महत्वपूर्ण सघनता है तथा विभिन्न जाति-आधारित व्यवसाय प्रचलित हैं (Census of India, 2011)।

जाति-आधारित दायरा: अध्ययन विशिष्ट पसमांदा समुदायों—अंसारी (बुनकर), मनिहार (आभूषण निर्माता), कुंजड़ा (सब्जी व्यापारी), कसाई (माँस व्यापारी), नट (कलाबाज/पशु व्यापारी), धोबी (कपड़े धोने वाले), तेली (तेल निष्कर्षक), रंगरेज (रंगाई/छपाई करने वाले), हलालखोर (स्वच्छता कार्यकर्ता), और चिक (छोटे जानवरों के कसाई)—तक सीमित है।

आयु सीमा: 18 से 90 वर्ष की आयु के प्रतिवादी।

3.3. नमूना आकार और तकनीक

अध्ययन में कुल 200 प्रतिवादी शामिल थे—प्रत्येक जाति से 20 प्रतिवादी (कुल 10 जातियाँ)। नमूना तकनीकों में उद्देश्यपूर्ण, सुविधा और स्नोबॉल नमूनाकरण का संयोजन उपयोग किया गया (Creswell, 2009; Kothari & Garg, 2018)। डेटा संग्रह साक्षात्कार अनुसूचियों (annexure i) और 10 फोकस समूह चर्चाओं (प्रत्येक जिले में एक) के माध्यम से किया गया। फोकस समूह चर्चाओं में प्रत्येक समूह में 8-10 प्रतिभागी शामिल थे, जिनमें विभिन्न आयु वर्गों और लिंगों के लोग शामिल थे।

3.4. सैद्धांतिक ढांचा

यह शोध तीन प्रमुख सिद्धांतों पर आधारित है:

1. **सामाजिक स्तरीकरण सिद्धांत:** यह समाज के भीतर व्यक्तियों और समूहों की पदानुक्रमित व्यवस्था की जाँच करता है। गुप्ता (1992) के अनुसार, सामाजिक स्तरीकरण सिद्धांत यह समझने में सहायक है कि किस प्रकार संसाधनों, अवसरों और प्रतिष्ठा का वितरण सामाजिक पदानुक्रम के अनुसार होता है।
2. **अंतर्विभाजकता सिद्धांत:** यह एकाधिक पहचानों के प्रतिच्छेदन से उत्पन्न यौगिक नुकसानों को समझता है (Crenshaw, 1989; Cho, Crenshaw, & McCall, 2013)।
3. **हाशिएकरण और सामाजिक बहिष्कार सिद्धांत:** यह संसाधनों और अवसरों तक पहुँच से व्यवस्थित वंचना की प्रक्रियाओं की जाँच करता

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

है (Sen, 2000; Jodhka & Shah, 2010)।

3.5. परिचालन परिभाषाएँ

- **पसमांदा मुसलमान:** निचली जाति या दलित मुसलमान जो अक्सर मुस्लिम अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के रूप में वर्गीकृत होते हैं (Sikand, 2004; Ansari, 2023)।
- **अशरफ:** उच्च जाति के मुसलमान (सय्यद, शेख, मुगल, पठान) (Ansari, 1960; Ahmad, 1978)।
- **जाति-आधारित व्यवसाय:** पारंपरिक व्यवसाय जो भारतीय सामाजिक पदानुक्रम के भीतर विशिष्ट जाति समूहों से जुड़े हैं (Bhatty, 1973; Siddiqui, 1979)।
- **अंतर्विभाजकता:** एकाधिक, अंतर्विभाजक उत्पीड़न और नुकसान जो अतिव्यापी सामाजिक पहचानों पर आधारित हैं (Crenshaw, 1989)।
- **सामाजिक न्याय:** समाज में संसाधनों, अवसरों और विशेषाधिकारों का समान वितरण (Rawls, 1971; Hasan, 2009)।

4. निष्कर्ष और विश्लेषण

4.1. प्रतिवादियों की सामाजिक-जनसांख्यिकीय प्रोफ़ाइल

तालिका 1: प्रतिवादियों की आयु-वार वितरण

आयु वर्ग	अंसारी	मनिहार	कुंजड़ा	कसाई	नट	धोबी	तेली	रंगरेज	हलालखोर	चिक	कुल (%)
21-30	18%	16%	20%	22%	16%	18%	20%	18%	22%	20%	19%
31-40	24%	26%	22%	28%	50%	32%	28%	26%	32%	24%	29%
41-50	28%	30%	26%	24%	20%	20%	24%	28%	22%	28%	25%
51-60	14%	16%	18%	12%	8%	18%	14%	16%	12%	8%	14%
61-70	12%	10%	12%	10%	6%	8%	12%	10%	8%	20%	11%
71+	4%	2%	2%	4%	0%	4%	2%	2%	4%	0%	2%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

अध्ययन में अधिकांश प्रतिवादी (29%) 31-40 वर्ष की आयु सीमा में थे, उसके बाद 41-50 वर्ष (25%) और 21-30 वर्ष (19%) थे। नट समुदाय में सबसे अधिक युवा प्रतिवादी (50% 31-40 वर्ष) थे, जो इस समुदाय में युवा आबादी की उच्च सघनता को दर्शाता है। अधिकांश प्रतिवादी पुरुष थे (92%), जो इन समुदायों की अत्यधिक पितृसत्तात्मक प्रकृति को दर्शाता है जो महिला सदस्यों को अजनबी पुरुषों से बात करने की अनुमति नहीं देता। यह लिंग असंतुलन पसमांदा समुदायों में महिला आवाज़ों के व्यवस्थित बहिष्कार को दर्शाता है, जैसा कि फ़ज़ल (2013) ने भी अपने अध्ययन में पाया।

4.2. शैक्षिक स्थिति

तालिका 2: जाति-वार शैक्षिक योग्यता

शैक्षिक स्तर	अंसारी	मनिहार	कुंजड़ा	कसाई	नट	धोबी	तेली	रंगरेज	हलालखोर	चिक	कुल (%)
निरक्षर	22%	28%	32%	24%	64%	32%	26%	30%	18%	28%	30%
प्राथमिक	24%	22%	20%	26%	18%	24%	22%	20%	24%	20%	22%
माध्यमिक	22%	20%	18%	20%	10%	20%	20%	18%	22%	24%	19%
उच्च विद्यालय	16%	14%	14%	14%	8%	14%	16%	14%	14%	14%	14%
इंटरमीडिएट	8%	10%	8%	10%	0%	4%	8%	10%	10%	6%	7%
स्नातक	6%	4%	6%	4%	0%	4%	6%	6%	6%	6%	5%
स्नातकोत्तर	2%	2%	2%	2%	0%	2%	2%	2%	6%	2%	3%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

अध्ययन में पाया गया कि 30% प्रतिवादी निरक्षर थे। राष्ट्रीय साक्षरता दर (74.04%) और राज्य साक्षरता दर (67.68%) की तुलना में अध्ययन जनसंख्या की साक्षरता दर (70%) काफी कम है (Census of India, 2011)। नट समुदाय में निरक्षरता दर सर्वाधिक (64%) पाई गई, उसके बाद कुंजड़ा (32%), धोबी (32%), और रंगरेज (30%)। साक्षर प्रतिवादियों में, सर्वाधिक (22%) प्राथमिक स्तर तक शिक्षित थे, उसके बाद 19% माध्यमिक और 14% उच्च विद्यालय तक शिक्षित थे। केवल 5% ने स्नातक और 3% ने स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त की थी। नट समुदाय में कोई भी प्रतिवादी इंटरमीडिएट या उससे उच्च स्तर तक नहीं पढ़ा था।

निम्न साक्षरता स्तरों का प्राथमिक कारण समुदाय की गरीबी है, जैसा कि ड्रेज़ और सेन (2013) ने भी तर्क दिया कि आर्थिक अभाव शैक्षिक अवसरों तक पहुँच को सीमित करता है। सच्चर समिति (2005) ने भी पाया कि मुस्लिम समुदाय की शैक्षिक स्थिति राष्ट्रीय औसत से काफी पीछे है, और पसमांदा मुसलमानों की स्थिति और भी खराब है। खान और बुतूल (2013) ने भारत में मुसलमानों की शिक्षा और विकास के अपने तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि पसमांदा मुसलमानों की शैक्षिक स्थिति अन्य सामाजिक समूहों की तुलना में सबसे खराब है।

4.3. आर्थिक स्थिति

तालिका 3: जाति-वार पारिवारिक आय वितरण

आय सीमा (₹)	अंसारी	मनिहार	कुंजड़ा	कसाई	नट	धोबी	तेली	रंगरेज	हलालखोर	चिक
0 - 5,000	2%	4%	6%	2%	8%	0%	4%	4%	0%	4%
5,001 - 10,000	38%	42%	48%	36%	80%	30%	40%	44%	36%	52%
10,001 - 15,000	22%	20%	18%	24%	12%	24%	20%	18%	16%	16%
15,001 - 20,000	12%	12%	10%	12%	0%	8%	12%	12%	4%	8%
20,001 - 25,000	8%	6%	6%	8%	0%	10%	8%	6%	8%	0%
25,001 - 30,000	10%	8%	6%	10%	0%	12%	8%	8%	12%	20%
30,001 - 50,000	6%	6%	4%	6%	0%	12%	6%	6%	20%	0%
50,000+	2%	2%	2%	2%	0%	4%	2%	2%	4%	0%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

परिवार की आय ₹3,000 से ₹60,000 तक विस्तृत थी, जिसमें औसत आय ₹15,915 थी। 52% परिवारों की मासिक आय ₹5,001-10,000 के बीच थी, जो राष्ट्रीय गरीबी रेखा से काफी नीचे है (Planning Commission, 2014)। नट समुदाय सबसे अधिक आर्थिक रूप से वंचित था, जिसमें 80% परिवारों की आय ₹5,001-10,000 के बीच थी और कोई भी परिवार ₹15,000 से अधिक आय नहीं रखता था। इसके विपरीत, धोबी और हलालखोर समुदायों में कुछ परिवार ₹30,000-50,000 की आय रखते थे, जो इन समुदायों में सरकारी नौकरियों (स्वच्छता कार्य) के कारण था।

देशपांडे और बापना (2008) ने भी पाया कि दलित मुसलमानों की आर्थिक स्थिति उनके हिंदू समकक्षों की तुलना में काफी खराब है। थोराट और न्यूमैन (2012) ने तर्क दिया कि जाति-आधारित आर्थिक भेदभाव पसमांदा मुसलमानों की गरीबी को कायम रखता है। सच्चर समिति (2005) ने भी पाया कि मुस्लिम समुदाय रोजगार और कार्य जनसंख्या के मामले में अनुसूचित जाति की जनसंख्या की तुलना में काफी कम है।

4.4. आवास और बुनियादी सुविधाएँ

तालिका 4: जाति-वार आवास सुविधाएँ

सुविधा	अंसारी	मनिहार	कुंजड़ा	कसाई	नट	धोबी	तेली	रंगरेज	हलालखोर	चिक	कुल
पक्का मकान	82%	78%	72%	80%	16%	100%	80%	76%	100%	80%	76%
अर्ध-पक्का	12%	14%	16%	12%	24%	0%	14%	16%	0%	20%	11%
कच्चा मकान	6%	8%	12%	8%	60%	0%	6%	8%	0%	0%	13%
गैस कनेक्शन	72%	68%	62%	70%	44%	100%	70%	66%	100%	50%	70%
बिजली	84%	80%	76%	82%	56%	100%	82%	78%	100%	96%	83%
शौचालय	78%	74%	68%	76%	20%	100%	76%	72%	100%	88%	75%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

अध्ययन में पाया गया कि 76% परिवार पक्के मकानों में रहते हैं, 11% अर्ध-पक्के मकानों में, और 13% कच्चे मकानों में। धोबी और हलालखोर जातियों में 100% पक्के मकान, बिजली, गैस और शौचालय की सुविधा पाई गई, जो इन समुदायों में सरकारी नौकरियों (स्वच्छता कार्य) के कारण थी। नट समुदाय सबसे अधिक वंचित पाया गया—60% कच्चे मकानों में, 80% के पास शौचालय नहीं, 56% के पास बिजली नहीं, और 56%

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

के पास गैस कनेक्शन नहीं। नट समुदाय की यह दयनीय स्थिति उनके अत्यधिक हाशिएकरण को दर्शाती है, जैसा कि रियाज़ और रहीमान (2022) ने भी अपने अध्ययन में पाया।

मार्टिन (2023) ने संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्यों के संदर्भ में पानी और स्वच्छता की उपलब्धता का विश्लेषण करते हुए पाया कि भारत में अभी भी लाखों लोगों के पास बुनियादी स्वच्छता सुविधाएँ नहीं हैं, और पसमांदा मुसलमान इस वंचना का सबसे बड़ा शिकार हैं। सेंटर फॉर इक्विटी स्टडीज़ (2009) ने भी पाया कि पसमांदा मुस्लिम समुदायों की आवास और बुनियादी सुविधाओं की स्थिति अत्यंत खराब है।

4.5. जाति-आधारित व्यवसाय

तालिका 5: जाति-वार प्रमुख व्यवसाय

जाति	प्रमुख व्यवसाय	परिवारों की संख्या (%)
अंसारी	बुनकरी	85%
मनिहार	आभूषण निर्माण	80%
कुंजड़ा	सब्जी व्यापार	78%
कसाई	माँस व्यापार	82%
नट	पशु व्यापार/कलाबाजी	76%
धोबी	कपड़े धोना	90%
तेली	तेल निष्कर्षण	74%
रंगरेज	रंगाई/छपाई	72%
हलालखोर	स्वच्छता कार्य	88%
चिक	पशु वध (छोटे जानवर)	84%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

83% परिवारों ने बताया कि जाति-आधारित व्यवसाय उनका प्राथमिक व्यवसाय है। 41% परिवारों का एक अतिरिक्त व्यवसाय भी है, जो आय स्रोतों में विविधता लाने की इच्छा को दर्शाता है। 72% प्रतिवादी अपने पारंपरिक व्यवसाय को बदलना चाहते हैं, और 71% को विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारणों से इसे बदलना मुश्किल लगता है। मुख्य कारणों में पूँजी की कमी, शिक्षा का अभाव, और सामाजिक भेदभाव शामिल थे।

यह निष्कर्ष अनवर (2005) के तर्क को पुष्ट करता है कि पसमांदा मुसलमानों की जाति-आधारित व्यवसायों में फँसी हुई स्थिति उनकी आर्थिक गतिशीलता को बाधित करती है। सिकंद (2007) ने भी पाया कि भारतीय मुसलमानों के बीच वंशानुगत व्यवसाय जाति व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण पहलू हैं जो सामाजिक स्तरीकरण को कायम रखते हैं। भट्टी (1973) ने भी अपने अध्ययन में पाया कि जाति-आधारित व्यवसाय मुस्लिम समाज में सामाजिक पदानुक्रम को निर्धारित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक हैं।

4.6. जातिगत भेदभाव और सामाजिक संबंध

तालिका 6: जाति-वार भेदभाव का अनुभव

जाति	भेदभाव का अनुभव (%)	कोई भेदभाव नहीं (%)
अंसारी	28%	72%
मनिहार	32%	68%
कुंजड़ा	36%	64%
कसाई	30%	70%
नट	96%	4%
धोबी	76%	24%
तेली	34%	66%
रंगरेज	30%	70%
हलालखोर	80%	20%
चिक	24%	76%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

69% प्रतिवादियों ने अपनी जाति के कारण सामाजिक भेदभाव का अनुभव करने की सूचना दी। नट समुदाय में यह दर सबसे अधिक (96%) थी, उसके बाद हलालखोर (80%), धोबी (76%), और चिक (24%) थे। 59% प्रतिवादियों के उच्च जाति/अशरफ समुदाय में मित्र हैं, लेकिन इनमें से कई ने बताया कि उनके अशरफ मित्र उनके घर नहीं आते। 62% प्रतिवादियों को उच्च जाति/अशरफ लोगों से सामाजिक आयोजनों में निमंत्रण मिलता है, लेकिन 25% ने बताया कि इन आयोजनों में उनके साथ अलग व्यवहार किया जाता है।

एक नट समुदाय के प्रतिवादी ने कहा: “हमें उच्च जाति के लोगों के घर जाने की अनुमति नहीं है। वे हमें छूते भी नहीं हैं। हमारे बच्चे उनके बच्चों के साथ नहीं खेल सकते। हमें अलग-अलग बर्तनों में खाना दिया जाता है।” एक हलालखोर प्रतिवादी ने कहा: “हालाँकि हमारे पास अब सरकारी नौकरी है, फिर भी हमें समाज में वही हीन भावना से देखा जाता है। हमारी जाति हमारा पीछा नहीं छोड़ती।”

यह निष्कर्ष अहमद (1978) और भट्टी (1973) के अध्ययनों को पुष्ट करता है जिन्होंने पाया कि भारतीय मुसलमानों के बीच जातिगत भेदभाव गहराई से जड़ें जमाए हुए है। जोधका और शाह (2010) ने भी तर्क दिया कि दक्षिण एशिया में जाति और छुआछूत की प्रथाएँ सभी धार्मिक समुदायों में व्याप्त हैं, और पसमांदा मुसलमान इसका सबसे बड़ा शिकार हैं। जसपाल (2011) ने इस्लाम में जाति, धर्म और लिंग के अंतर्विभाजन का विश्लेषण करते हुए पाया कि पसमांदा मुसलमानों की पहचान एक जटिल अंतर्विभाजक जाल में फँसी हुई है जो उनके हाशिएकरण को कायम रखती है।

4.7. धार्मिक स्थान

अध्ययन में पाया गया कि लगभग सभी प्रतिवादियों को मस्जिद में किसी भी प्रकार के भेदभाव का अनुभव नहीं हुआ। हालाँकि, नट समुदाय के प्रतिवादियों ने बताया कि उनकी मस्जिद एक विशिष्ट जाति समूह से जुड़ी है, लेकिन यह भेदभाव के कारण नहीं बल्कि भौगोलिक स्थान के कारण है, और उन्हें किसी भी मस्जिद में नमाज़ पढ़ने की अनुमति है। कब्रिस्तान के उपयोग में, चिक समुदाय को छोड़कर सभी प्रतिवादी सामान्य कब्रिस्तान का उपयोग करते हैं। चिक समुदाय के पास अपना अलग कब्रिस्तान है, जो उनके पूर्वजों द्वारा खरीदा गया था, लेकिन किसी ने भी कब्रिस्तान के उपयोग में जातिगत भेदभाव की सूचना नहीं दी।

यह निष्कर्ष आंशिक रूप से सिद्दीकी (1979) के अध्ययन से भिन्न है, जिन्होंने बंगाल के मुसलमानों में कब्रिस्तानों के उपयोग में जातिगत भेदभाव पाया। यह अंतर क्षेत्रीय विविधताओं को दर्शाता है, जैसा कि माइंस (1972) ने भी तर्क दिया कि स्थानीय इतिहास, सांस्कृतिक परंपराएँ, और प्रमुख हिंदू समाज के साथ एकीकरण की सीमा जाति-समान प्रथाओं की व्यापकता को प्रभावित करते हैं।

4.8. नागरिक सुविधाएँ

तालिका 7: जाति-वार नागरिक सुविधाओं तक पहुँच

सुविधा	अंसारी	मनिहार	कुंजड़ा	कसाई	नट	धोबी	तेली	रंगरेज	हलालखोर	चिक
स्कूल की उपलब्धता	80%	78%	74%	80%	0%	100%	80%	76%	100%	100%
चिकित्सा सुविधा	78%	76%	72%	76%	0%	100%	78%	74%	100%	100%
नगरपालिका जल	68%	64%	58%	66%	0%	58%	64%	60%	68%	100%
पक्की सड़क	72%	68%	62%	70%	0%	80%	70%	66%	86%	94%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

75% प्रतिवादियों के पास अपने इलाके में स्कूल हैं, जबकि 25% (सभी नट समुदाय) के पास नहीं हैं। इसी प्रकार, 75% के पास चिकित्सा सुविधाएँ हैं, जबकि 25% (सभी नट समुदाय) के पास नहीं हैं। 43% (सभी नट समुदाय) सार्वजनिक हैंडपंप पर निर्भर हैं। नट समुदाय में 100% कच्ची सड़कें हैं। 27% प्रतिवादियों (100% नट और 6% हलालखोर) ने शिक्षा तक पहुँचने में कठिनाई की सूचना दी। नट समुदाय के बच्चों को 5-10 किमी दूर स्कूल जाना पड़ता है या क्षेत्र में मदरसा शिक्षा पर निर्भर रहना पड़ता है।

33% ने चिकित्सा सुविधाओं तक पहुँचने में कठिनाई की सूचना दी—डॉक्टरों की अनुपलब्धता, वित्तीय बाधाएँ, दवाओं की अनुपलब्धता, और नैदानिक सुविधाओं का अभाव। नट समुदाय में सीवेज प्रबंधन सबसे खराब स्थिति में है—खुली जल निकासी लाइनें कहीं नहीं जातीं और निवासियों को मैन्युअल रूप से जल निकासी करनी पड़ती है।

यह निष्कर्ष सेंटर फॉर इक्विटी स्टडीज़ (2009) की रिपोर्ट को पुष्ट करता है, जिसने पाया कि पसमांदा मुस्लिम समुदायों में नागरिक सुविधाओं की स्थिति अत्यंत खराब है। मार्टिन (2023) ने भी पाया कि भारत में अभी भी लाखों लोगों के पास बुनियादी नागरिक सुविधाएँ नहीं हैं, और पसमांदा मुसलमान इस वंचना का सबसे बड़ा शिकार हैं।

5. राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक न्याय (2014-2024)

5.1. पसमांदा राजनीति का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

पसमांदा आंदोलन की बीजारोपण 1930 के दशक में अब्दुल क़य्यूम अंसारी द्वारा किया गया था, जिन्होंने अशरफ मुसलमानों के प्रभुत्व को चुनौती दी (Alam, 2009)। हालाँकि, 1990 में मंडल आयोग के कार्यान्वयन के बाद पसमांदा राजनीति को गति मिली (Jaffrelot, 2003)। सच्चर समिति (2005) और रंगनाथ मिश्र आयोग (2007) की सिफारिशों के बाद यह आंदोलन और मजबूत हुआ।

आलम (2003) ने तर्क दिया कि 1990 के दशक से पहले, चुनावों में उम्मीदवार अधिकतर उच्च जाति के मुसलमान होते थे और हर कोई उन्हें जाति की परवाह किए बिना वोट देता था। 1990 के बाद, मंडल युग में निम्न जाति के मुसलमानों ने चुनावों में अपनी उम्मीदवारी पेश करना शुरू किया। तब उच्च जाति के मुसलमानों ने यह कथा सामने रखी कि मुस्लिम समुदाय में जातिवाद आ गया है और यह मिल्लत के विचार को नुकसान पहुँचा रहा है। ऐसी कथाएँ उच्च जाति की चिंता को दर्शाती हैं क्योंकि उन्हें सत्ता के केंद्रों को निम्न जातियों को खोने का डर था।

5.2. 2014-2024: राजनीतिक परिवर्तन

2014 के बाद पसमांदा मुसलमानों की राजनीतिक चर्चा राष्ट्रीय विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बनी (Ali & Singh, 2024):

1. **भाजपा की पहल:** भारतीय जनता पार्टी ने पसमांदा समुदाय तक पहुँच बनाने का प्रयास किया, "पसमांदा सम्मेलन" आयोजित किए, और कई पसमांदा नेताओं को पार्टी में शामिल किया।
2. **सपा की रणनीति:** समाजवादी पार्टी ने पारंपरिक पसमांदा नेतृत्व को बनाए रखते हुए नए चेहरों को मौका दिया।
3. **बसपा का दृष्टिकोण:** बहुजन समाज पार्टी ने दलित-मुस्लिम गठबंधन के माध्यम से पसमांदा मतदाताओं को आकर्षित करने का प्रयास किया।
4. **कांग्रेस की पहल:** कांग्रेस ने अल्पसंख्यक सशक्तीकरण के मुद्दे पर पसमांदा समुदाय को संबोधित किया।

मुजतबा (2017) ने उत्तर प्रदेश में मुस्लिम 'अन्य पिछड़ा वर्ग' के आंदोलन का विश्लेषण करते हुए पाया कि 2014 के बाद पसमांदा मुसलमानों की राजनीतिक चेतना में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, लेकिन वास्तविक राजनीतिक प्रतिनिधित्व अभी भी सीमित है।

5.3. राजनीतिक भागीदारी के स्तर

तालिका 8: जाति-वार राजनीतिक भागीदारी

जाति	जाति-संगठन की जानकारी (%)	जाति-संगठन की सदस्यता (%)	चुनाव लड़ा (%)	राजनीतिक दल की सदस्यता (%)
अंसारी	28%	24%	14%	8%
मनिहार	24%	20%	12%	6%
कुंजड़ा	20%	16%	10%	4%
कसाई	26%	22%	12%	6%
नट	0%	0%	8%	8%

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

जाति	जाति-संगठन की जानकारी (%)	जाति-संगठन की सदस्यता (%)	चुनाव लड़ा (%)	राजनीतिक दल की सदस्यता (%)
धोबी	58%	54%	10%	6%
तेली	22%	18%	10%	4%
रंगरेज	20%	16%	8%	4%
हलालखोर	68%	64%	12%	8%
चिक	0%	0%	16%	0%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

केवल 32% प्रतिवादी जाति-आधारित संगठनों के बारे में जानते थे, और केवल 30% सदस्य थे। केवल 12% ने स्थानीय चुनाव लड़ा था, और केवल 6% राजनीतिक दलों के सदस्य थे (सपा, बसपा, रालोद)। हलालखोर और धोबी समुदायों में जाति-संगठनों के बारे में जागरूकता सबसे अधिक थी (68% और 58% क्रमशः), जो इन समुदायों में सरकारी नौकरियों और संगठित सामुदायिक प्रयासों के कारण थी।

एक हलालखोर प्रतिवादी ने कहा: "हमारा संगठन हमें हमारे अधिकारों के बारे में बताता है। हम सरकारी योजनाओं के बारे में जानते हैं और उनका लाभ उठाते हैं। लेकिन राजनीतिक दलों में हमारा कोई प्रतिनिधित्व नहीं है।"

यह निष्कर्ष आलम (2003) के तर्क को पुष्ट करता है कि मुस्लिम समुदाय के भीतर राजनीतिक भागीदारी अभी भी अशरफ वर्ग के प्रभुत्व में है, और पसमांदा मुसलमानों की राजनीतिक भागीदारी सीमित है।

5.4. अशरफ प्रभुत्व की धारणा

तालिका 9: अशरफ प्रभुत्व की धारणा

जाति	मानते हैं कि अशरफ को प्राथमिकता मिलती है (%)	नहीं मानते/तटस्थ (%)
अंसारी	72%	28%
मनिहार	76%	24%
कुंजड़ा	80%	20%
कसाई	74%	26%
नट	84%	16%
धोबी	90%	10%
तेली	78%	22%
रंगरेज	74%	26%
हलालखोर	100%	0%
चिक	68%	32%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

86% प्रतिवादियों का मानना है कि राजनीतिक दल पसमांदा मुसलमानों की तुलना में उच्च जाति के मुसलमानों (अशरफ) को प्राथमिकता देते हैं। हलालखोर समुदाय में यह धारणा 100% पाई गई। एक प्रतिवादी ने कहा: "ज़ात-पात तो हर जगह देखी जाती है। घर से लेकर सियासत तक सब जगह ज़ात पूछी ही जाती है। आप छोटी ज़ात से हैं तो आप कार्यकर्ता रहेंगे और थोड़ा पैसा है तो आपको माइनॉरिटी सेल का सचिव बना देंगे, लेकिन उससे ऊपर कोई नहीं पहुँचता।"

यह निष्कर्ष अनवर (2005) और आलम (2009) के अध्ययनों को पुष्ट करता है, जिन्होंने पाया कि मुस्लिम समुदाय के राजनीतिक और सामाजिक संस्थानों पर अशरफ वर्ग का प्रभुत्व है, और पसमांदा मुसलमानों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व से बहिष्कृत किया जाता है।

5.5. संवैधानिक बहिष्कार और आरक्षण

तालिका 10: आरक्षण के बारे में जागरूकता

जाति	आरक्षण के बारे में जागरूक (%)	सरकारी योजनाओं से लाभान्वित (%)
अंसारी	32%	28%
मनिहार	28%	24%
कुंजड़ा	24%	20%
कसाई	30%	26%
नट	16%	42%
धोबी	42%	52%
तेली	26%	22%
रंगरेज	24%	20%
हलालखोर	56%	32%
चिक	0%	0%

स्रोत: क्षेत्र सर्वेक्षण, 2024

64% प्रतिवादी जाति-आधारित आरक्षण के बारे में नहीं जानते थे। 47% सरकारी योजनाओं के बारे में जानते थे, लेकिन केवल 32% ने लाभ प्राप्त किया था। सबसे अधिक लाभार्थी धोबी समुदाय (52%) में थे, उसके बाद नट (42%) और हलालखोर (32%)। चिक समुदाय में कोई लाभार्थी नहीं था। नट समुदाय में आरक्षण के बारे में जागरूकता सबसे कम (16%) थी, लेकिन सरकारी योजनाओं से लाभान्वित होने की दर अपेक्षाकृत अधिक (42%) थी, जो इन समुदायों में सामुदायिक संगठनों की भूमिका को दर्शाती है।

पसमांदा मुसलमान, अनुच्छेद 341 और संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 के अनुसार अनुसूचित जाति की परिभाषा के दायरे से बाहर हैं (Kumar, 2023)। यह ऐतिहासिक बहिष्कार उन्हें उनके हिंदू समकक्षों की तुलना में वंचित रखता है, जो एससी आरक्षण के पात्र हैं (Deshpande & Bapna, 2008)। रियाज़ और रहीमान (2022) ने तर्क दिया कि यह बहिष्कार पसमांदा मुसलमानों को दोहरी भेद्यता (double vulnerability) में डालता है—एक तो मुस्लिम समुदाय के भीतर उनकी जाति के कारण और दूसरी सरकारी नीतियों में उनके धार्मिक अल्पसंख्यक होने के कारण।

5.6. अंतर्विभाजक नुकसान

अध्ययन में पाया गया कि पसमांदा मुसलमानों को नुकसानों का एक जटिल

अंतर्विभाजक जाल सामना करना पड़ता है (Crenshaw, 1989; Cho, Crenshaw, & McCall, 2013):

1. **जाति × धर्म:** इस्लाम की समतावादी शिक्षाओं के बावजूद, वे अपनी जाति के कारण समुदाय के भीतर भेदभाव का सामना करते हैं, और प्रमुख हिंदू समाज में मुसलमानों के रूप में अतिरिक्त भेदभाव का सामना करते हैं (Jaspal, 2011; Fazal, 2013)।
2. **जाति × आर्थिक स्थिति:** जाति-आधारित व्यवसाय निम्न आय, कौशल विकास के सीमित अवसरों, और आर्थिक गतिशीलता की कमी में योगदान करते हैं (Thorat & Neuman, 2012; Deshpande & Bapna, 2008)।
3. **जाति × शिक्षा:** जातिगत भेदभाव और आर्थिक बाधाएँ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच को प्रतिबंधित करती हैं, जिससे वंचना का चक्र बना रहता है (Desai & Kulkarni, 2008; Sachar Committee, 2005)।
4. जाति × राजनीति: राजनीतिक दलों में अशरफ मुसलमानों का प्रभुत्व और पसमांदा मुसलमानों का बहिष्कार उनके हाशिएकरण को कायम रखता है (Alam, 2003; Anwar, 2005)।
5. जाति × नीति: अनुसूचित जाति के दायरे से बहिष्कार का अर्थ है कि उनके हिंदू समकक्षों की तुलना में उनके पास सकारात्मक कार्रवाई के कम अवसर हैं (Kumar, 2023; Deshpande & Bapna, 2008)।

यह अंतर्विभाजक विश्लेषण फज़ल (2013) के निष्कर्षों को पुष्ट करता है, जिन्होंने पाया कि पसमांदा मुस्लिम महिलाओं को तिहरे उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है, और नरसिम्हन (2021) के तर्क को पुष्ट करता है कि भारत में दलित और मुस्लिम होने का अर्थ है दोहरे हाशिएकरण का सामना करना।

6. चर्चा

6.1. सैद्धांतिक निहितार्थ

यह अध्ययन सामाजिक स्तरीकरण सिद्धांत, अंतर्विभाजकता, और हाशिएकरण के सिद्धांतों को महत्वपूर्ण सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

सामाजिक स्तरीकरण सिद्धांत: अध्ययन के निष्कर्ष इस सिद्धांत की प्रयोज्यता को भारतीय मुसलमानों के संदर्भ में मजबूत और विस्तारित करते हैं, जो इस्लाम के समतावादी सिद्धांतों के विपरीत गहराई से जड़ें जमाए हुए जाति-आधारित पदानुक्रमों के अस्तित्व को उजागर करते हैं (Gupta, 1992; Ahmad, 1978)। डेटा ने भारतीय मुसलमानों के बीच जाति-समान प्रथाओं की व्यापकता का खुलासा किया, जैसे पदानुक्रमित क्रम, अंतर्विवाह, और वंशानुगत व्यवसाय, जो हिंदू जाति व्यवस्था के समान एक स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था को कायम रखते हैं (Ansari, 1960; Bhatty, 1973; Siddiqui, 1979)।

अंतर्विभाजकता सिद्धांत: अध्ययन के निष्कर्ष पसमांदा मुसलमानों द्वारा सामना किए जाने वाले नुकसानों की बहुआयामी और यौगिक प्रकृति को प्रकट करते हैं, जो भारत के व्यापक सामाजिक ढांचे के भीतर उनकी जाति और धार्मिक पहचानों के प्रतिच्छेदन से उत्पन्न होते हैं (Crenshaw, 1989; Cho, Crenshaw, & McCall, 2013)। जबकि संबंधित जातियों के उनके हिंदू समकक्ष अनुसूचित जाति कोटे और आरक्षण के पात्र थे, पसमांदा मुसलमानों को संवैधानिक मानदंडों के कारण समान समर्थन का अभाव था—यह विरोधाभास उनके सामने आने वाले अंतर्विभाजक नुकसानों को रेखांकित करता है (Deshpande & Bapna, 2008; Kumar, 2023)।

हाशिएकरण और सामाजिक बहिष्कार: अध्ययन के निष्कर्ष प्रणालीगत बाधाओं और संरचनात्मक असमानताओं पर प्रकाश डालते हैं (Sen, 2000; Jodhka & Shah, 2010)। पसमांदा मुसलमानों की सीमित शैक्षिक पहुँच को ऐतिहासिक नुकसानों, सांस्कृतिक कलंकों, और अपर्याप्त शैक्षिक अवसंरचना से जोड़ा जा सकता है—ये सभी प्रणालीगत बाधाएँ उनके हाशिएकरण को कायम रखती हैं (Desai & Kulkarni, 2008; Sachar Committee, 2005)।

6.2. 2014-2024: परिवर्तन की दशक

2014-2024 का दशक पसमांदा राजनीति के लिए महत्वपूर्ण रहा (Ali & Singh, 2024):

1. **चेतना का विस्तार:** पसमांदा शब्द का प्रयोग राष्ट्रीय राजनीतिक विमर्श में बढ़ा।
2. **राजनीतिक पहुँच:** विभिन्न राजनीतिक दलों ने पसमांदा समुदाय को संबोधित किया।
3. **नेतृत्व का उदय:** एक नया पसमांदा नेतृत्व वर्ग उभरा (Ali & Singh, 2024)।
4. **प्रतीकात्मक बनाम वास्तविक प्रतिनिधित्व:** बहस तेज़ हुई कि यह वास्तविक सामाजिक न्याय की दिशा है या केवल चुनावी रणनीति (Mujtaba, 2017)।

हालिया शोध इस बात पर बल देता है कि प्रतिनिधित्व के साथ-साथ शिक्षा, रोजगार, स्थानीय नेतृत्व और संस्थागत भागीदारी भी समान रूप से आवश्यक हैं (Ali & Singh, 2024; Alam, 2022)। अध्ययन के निष्कर्षों से पता चलता है कि 2014-2024 के दशक में पसमांदा विमर्श राष्ट्रीय राजनीति में अधिक प्रमुख हुआ, लेकिन केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है। वास्तविक सामाजिक न्याय के लिए शिक्षा, आर्थिक अवसर, राजनीतिक भागीदारी, स्थानीय नेतृत्व और संस्थागत सुधारों को समान महत्व देना होगा।

6.3. नीतिगत निहितार्थ

अध्ययन के निष्कर्षों के महत्वपूर्ण नीतिगत निहितार्थ हैं (Hasan, 2009; Thorat & Neuman, 2012):

1. **शैक्षिक समानता:** पसमांदा मुसलमानों के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए आरक्षण और सकारात्मक कार्रवाई उपायों की तत्काल आवश्यकता है—प्रवेश के लिए समर्पित कोटा, छात्रवृत्ति, और वित्तीय सहायता कार्यक्रम (Desai & Kulkarni, 2008; Sachar Committee, 2005)।
2. **आर्थिक सशक्तिकरण:** जाति-आधारित व्यवसायों में संलग्न पसमांदा मुसलमानों की अनूठी आवश्यकताओं के अनुरूप कौशल-निर्माण और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम विकसित किए जाने चाहिए। सूक्ष्म-वित्त योजनाएँ, उद्यमिता विकास कार्यक्रम, और सस्ती ऋण सुविधाओं तक पहुँच उन्हें अपने स्वयं के छोटे व्यवसाय स्थापित करने के लिए सशक्त बना सकती है (Thorat & Neuman, 2012; Deshpande & Bapna, 2008)।
3. **बुनियादी सुविधाएँ:** पसमांदा मुस्लिम आबादी की उच्च सांद्रता वाले क्षेत्रों में व्यापक अवसंरचना और सेवा वितरण तंत्र के विकास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए—नए शैक्षणिक संस्थान, स्वास्थ्य सुविधाएँ, और बुनियादी सुविधाएँ जैसे स्वच्छ पानी, स्वच्छता, और

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

आवास (Centre for Equity Studies, 2009; Martin, 2023)।

4. **जागरूकता अभियान:** पसमांदा मुसलमानों के बीच सरकारी कल्याणकारी योजनाओं के बारे में जागरूकता की कमी (केवल 32% लाभार्थी) को दूर करने के लिए लक्षित जागरूकता अभियान और आउटरीच प्रयासों की आवश्यकता है (Khanam, 2013; Rahman, 2019)।
5. **राजनीतिक सशक्तिकरण:** स्थानीय और राष्ट्रीय विधायी निकायों में आरक्षण या समर्पित सीटें, और महत्वाकांक्षी नेताओं को राजनीतिक प्रक्रिया में प्रभावी ढंग से भाग लेने के लिए आवश्यक कौशल और संसाधनों से लैस करने के लिए क्षमता-निर्माण कार्यक्रम (Alam, 2022; Mujtaba, 2017)।
6. **संवैधानिक सुधार:** पसमांदा मुसलमानों को अनुसूचित जाति के दायरे में लाने के लिए संवैधानिक संशोधन की आवश्यकता है, क्योंकि अनुच्छेद 341 और संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 के कारण वे वर्तमान में एससी कोटे से बाहर हैं (Kumar, 2023; Deshpande & Bapna, 2008)।

6.4. सामाजिक कार्य के लिए सिफारिशें

1. पसमांदा मुस्लिम समुदायों में सरकारी शिक्षा और स्वास्थ्य केंद्रों की निगरानी और मूल्यांकन (Centre for Equity Studies, 2009)।
2. सूचना और संचार संसाधन केंद्रों की स्थापना (Khanam, 2013)।
3. पसमांदा मुसलमानों को सरकारी नीतियों और योजनाओं से जोड़ना (Rahman, 2019)।
4. आजीविका संवर्धन के लिए ऋण और वित्त संस्थानों तक पहुँच की सुविधा (Thorat & Neuman, 2012)।
5. पसमांदा मुसलमानों के लिए रोजगार के अवसर बनाने के लिए सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच सहयोग की सुविधा (Deshpande & Bapna, 2008)।
6. कौशल विकास और उद्यमिता विकास कार्यक्रमों पर केंद्रित कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) पहलों की सुविधा (Chopra, 2022)।
7. पसमांदा मुसलमानों के सामने आने वाली विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों को संबोधित करने वाली समावेशी नीतियों के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तरों पर अनुसंधान और वकालत (Hasan, 2009; Alam, 2022)।

7. निष्कर्ष

इस्लाम समानता, न्याय और मानवीय गरिमा का धर्म है, किन्तु भारतीय मुस्लिम समाज में ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण सामाजिक स्तरीकरण विकसित हुआ। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के पसमांदा मुसलमानों का अनुभव दर्शाता है कि धार्मिक आदर्शों के बावजूद सामाजिक और राजनीतिक असमानताएँ बनी हुई हैं।

7.1. मुख्य निष्कर्ष:

1. **आर्थिक कठिनाई:** 52% परिवार ₹5,001-10,000 की मासिक आय के साथ गरीबी में जीते हैं।
2. **शैक्षिक अभाव:** 30% निरक्षर, केवल 3% स्नातकोत्तर।
3. **बुनियादी सुविधाओं का अभाव:** नट समुदाय में 60% कच्चे मकान, 80% के पास शौचालय नहीं, 100% के पास स्कूल या स्वास्थ्य सुविधाएँ नहीं।
4. **व्यापक भेदभाव:** 69% ने जातिगत भेदभाव का अनुभव किया, नट समुदाय में 96%।
5. **राजनीतिक बहिष्कार:** केवल 12% ने चुनाव लड़ा, 6% राजनीतिक दल के सदस्य, 86% मानते हैं कि अशरफ को प्राथमिकता मिलती है।
6. **नीतिगत विफलता:** 64% आरक्षण के बारे में नहीं जानते, केवल 32% ने सरकारी योजनाओं से लाभ उठाया।
7. **संवैधानिक बहिष्कार:** अनुच्छेद 341 के कारण एससी कोटे से बाहर।

2014-2024 के दौरान पसमांदा विमर्श राष्ट्रीय राजनीति में अधिक प्रमुख हुआ, परंतु केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है। वास्तविक सामाजिक न्याय के लिए शिक्षा, आर्थिक अवसर, राजनीतिक भागीदारी, स्थानीय नेतृत्व और संस्थागत सुधारों को समान महत्व देना होगा। इससे इस्लाम के समानता-आधारित आदर्श और भारतीय लोकतंत्र के संवैधानिक मूल्यों के बीच अधिक सार्थक सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है (Hasan, 2009; Alam, 2022)।

अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि पसमांदा मुसलमानों की स्थिति केवल आर्थिक वंचना नहीं है, बल्कि यह एक संरचनात्मक और प्रणालीगत हाशिएकरण है जो जाति, धर्म और राजनीति के अंतर्विभाजक जाल में फँसा हुआ है। इस हाशिएकरण को समाप्त करने के लिए न केवल नीतिगत सुधारों की आवश्यकता है, बल्कि सामाजिक चेतना, सामुदायिक संगठन, और राजनीतिक सशक्तिकरण की भी आवश्यकता है (Anwar, 2005; Alam, 2009)।

8. सिफारिशें

8.1. नीतिगत सिफारिशें

1. पसमांदा मुसलमानों के लिए शैक्षिक आरक्षण और छात्रवृत्ति कार्यक्रम (Desai & Kulkarni, 2008; Sachar Committee, 2005)।
2. जाति-आधारित व्यवसायों के आधुनिकीकरण के लिए कौशल विकास और व्यावसायिक प्रशिक्षण (Thorat & Neuman, 2012)।
3. पसमांदा बहुल क्षेत्रों में स्कूल, अस्पताल, स्वच्छ जल और सड़क अवसंरचना का विकास (Centre for Equity Studies, 2009; Martin, 2023)।
4. सरकारी योजनाओं और आरक्षण के बारे में जागरूकता अभियान (Rahman, 2019)।
5. स्थानीय निकायों और राज्य विधानसभाओं में आरक्षण/कोटा (Hasan, 2009; Alam, 2022)।
6. पसमांदा मुसलमानों को अनुसूचित जाति के दायरे में लाने के लिए संवैधानिक संशोधन (Kumar, 2023; Deshpande & Bapna, 2008)।

8.2. सामाजिक कार्य के लिए सिफारिशें

1. पसमांदा मुस्लिम समुदायों में सरकारी शिक्षा और स्वास्थ्य केंद्रों की निगरानी (Centre for Equity Studies, 2009)।
2. सूचना और संचार संसाधन केंद्रों की स्थापना (Khanam, 2013)।

3. पसमांदा मुसलमानों को सरकारी योजनाओं से जोड़ना (Rahman, 2019)।
4. आजीविका संवर्धन के लिए ऋण और वित्त संस्थानों तक पहुँच की सुविधा (Thorat & Neuman, 2012)।
5. कौशल विकास और उद्यमिता पर केंद्रित सीएसआर पहलों की सुविधा (Chopra, 2022)।
6. समावेशी नीतियों के लिए अनुसंधान और वकालत (Hasan, 2009; Alam, 2022)।

9. अध्ययन की सीमाएँ

1. **भौगोलिक सीमा:** अध्ययन केवल पश्चिमी उत्तर प्रदेश के दस जिलों तक सीमित है, जो पूरे उत्तर प्रदेश या अन्य राज्यों में पसमांदा मुसलमानों की स्थिति को प्रतिबिंबित नहीं कर सकता (Mines, 1972; Ahmad, 1978)।
2. **नमूना आकार:** 200 प्रतिवादी पूरी विविधता को पकड़ने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते हैं, विशेषकर जब प्रत्येक जाति से केवल 20 प्रतिवादी शामिल थे (Creswell, 2009; Kothari & Garg, 2018)।
3. **लिंग असंतुलन:** 92% पुरुष प्रतिवादी, महिला दृष्टिकोणों का कम प्रतिनिधित्व, जो पसमांदा मुस्लिम महिलाओं के अनुभवों को समझने को सीमित करता है (Fazal, 2013; Crenshaw, 1989)।
4. **स्व-रिपोर्ट डेटा:** सामाजिक वांछनीयता पूर्वाग्रह और स्मरण पूर्वाग्रह की संभावना, जो भेदभाव और आय जैसे संवेदनशील मुद्दों पर रिपोर्टिंग को प्रभावित कर सकती है (Dulock, 1993)।
5. **सामान्यीकरण की सीमा:** निष्कर्ष अन्य क्षेत्रों या राज्यों पर सामान्यीकृत नहीं किए जा सकते, क्योंकि जाति-समान प्रथाओं में क्षेत्रीय विविधताएँ हैं (Mines, 1972; Ahmad, 1978)।
6. **गैर-संभाव्यता नमूनाकरण:** उद्देश्यपूर्ण, सुविधा, और स्नोबॉल नमूनाकरण पूर्वाग्रह का परिचय दे सकता है, जो निष्कर्षों की प्रतिनिधित्वशीलता को प्रभावित कर सकता है (Creswell, 2009; Kothari & Garg, 2018)।
7. **अनुदैर्ध्य डेटा का अभाव:** अध्ययन एक क्रॉस-सेक्शनल अध्ययन है, जो समय के साथ परिवर्तनों को ट्रैक नहीं कर सकता (Dulock, 1993)।

10. भविष्य के शोध के लिए दिशा-निर्देश

1. पसमांदा मुसलमानों के मानसिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण पर अंतर्विभाजक नुकसानों के प्रभाव का अन्वेषण (Jaspal, 2011; Fazal, 2013)।
2. पसमांदा मुसलमानों और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति समुदायों के बीच तुलनात्मक अध्ययन (Deshpande & Bapna, 2008; Thorat & Neuman, 2012)।
3. पसमांदा मुस्लिम महिलाओं की आवाज़ों और दृष्टिकोणों को प्राथमिकता देते हुए अंतर्विभाजक नारीवादी दृष्टिकोण (Fazal, 2013; Crenshaw, 1989)।
4. नीतिगत हस्तक्षेपों के दीर्घकालिक प्रभावों को ट्रैक करने के लिए अनुदैर्ध्य अध्ययन (Dulock, 1993; Creswell, 2009)।
5. अन्य राज्यों (बिहार, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल) में भौगोलिक दायरे का विस्तार (Ahmad, 1978; Mines, 1972)।
6. पसमांदा मुसलमानों को अनुसंधान प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल करने वाले सहभागी और सामुदायिक-आधारित दृष्टिकोण (Kothari & Garg, 2018)।
7. डिजिटल स्टोरीटेलिंग, दृश्य नृवंशविज्ञान, और मोबाइल अनुप्रयोगों जैसी नवीन डेटा संग्रह तकनीकों का एकीकरण (Creswell, 2009)।
8. अंतःविषय और अंतर्विभाजक दृष्टिकोण जो समाजशास्त्र, मानवविज्ञान, राजनीति विज्ञान, और सार्वजनिक नीति से अंतर्दृष्टि प्राप्त करते हैं (Cho, Crenshaw, & McCall, 2013; Sen, 2000)।
9. पसमांदा मुसलमानों के बीच डिजिटल विभाजन और सूचना प्रौद्योगिकी तक पहुँच का अध्ययन (Chopra, 2022)।
10. पसमांदा मुसलमानों और अन्य अल्पसंख्यक समुदायों (जैसे दलित ईसाई) के बीच तुलनात्मक अध्ययन (Kumar, 2023; Nair, 2016)।

DECLARATIONS

लेखक(लेखकों) का योगदान (Author(s) Contribution)

यह शोध एकल लेखक (Single Author) द्वारा किया गया है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के उपयोग की स्वीकृति (Uses of AI Acknowledgement)

लागू नहीं।

वित्तीय सहायता (Funding Information)

यह अध्ययन किसी भी बाहरी वित्तीय सहायता के बिना किया गया है। इस शोध के लिए किसी सरकारी, वाणिज्यिक अथवा गैर-लाभकारी वित्तपोषण संस्था से कोई आर्थिक सहायता प्राप्त नहीं हुई।

डेटा एवं सामग्री की उपलब्धता (Availability of Data and Materials)

इस अध्ययन में प्रयुक्त डेटा लेखक से अनुरोध करने पर उपलब्ध कराया जा सकता है।

हितों का टकराव (Competing Interests)

लेखक घोषित करता/करती है कि इस शोध को प्रभावित करने वाले किसी प्रकार के वित्तीय, व्यावसायिक अथवा व्यक्तिगत हितों का कोई टकराव नहीं है।.

क्लिनिकल परीक्षण पंजीकरण (यदि लागू हो)

लागू नहीं।

मानव नैतिकता एवं सहभागिता के लिए सहमति (Human Ethics and Consent to Participate)

इस अध्ययन में किसी प्रकार का नैदानिक (Clinical) हस्तक्षेप अथवा ऐसा प्रयोग शामिल नहीं था, जिसके लिए औपचारिक नैतिक स्वीकृति (Ethical Approval) की आवश्यकता हो।

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

REFERENCES

अंसारी, के. ए. (2023). *रिविज़िटिंग द माइनॉरिटी इमैजिनेशन: एन इन्क्वायरी इंटू द एंटी-कास्ट पसमांदा-मुस्लिम डिस्कोर्स इन इंडिया।* क्रिटिकल फिलॉसफी ऑफ रेस, *11*(1), 120–147।

अंसारी, जी. (1960). *मुस्लिम कास्ट इन उत्तर प्रदेश: अ स्टडी ऑफ कल्चर कॉन्टैक्ट* (वॉल. 12). लखनऊ: एथ्नोग्राफिक एंड फोक कल्चर सोसाइटी।

अनवर, ए. (2005). *मसावात की जंग: स्ट्रगल फॉर इक्वैलिटी।* दिल्ली: इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट।

अमीरुद्दीन, टी. ए. (2018, 17 जून). *डू मुस्लिम्स इन केरल फॉलो द कास्ट सिस्टम? मर्डर ऑफ दलित क्रिश्चियन ग्रूम इग्नाइट्स डिबेट।* स्क्रॉल.इन। रिट्रीव्ड 15 मार्च, 2022, फ्रॉम: https://scroll.in/article/882246/do-muslims-in-kerala-follow-the-caste-system-murder-of-dalit-christian-groom-ignites-debate

अली, एम., एवं सिंह, एस. एस. (2024). *कॉन्टेम्पररी पसमांदा लीडरशिप एंड द हिंदुत्व पॉलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश।* स्टडीज़ इन इंडियन पॉलिटिक्स, *12*(1).

अहमद, आई. (1978). *कास्ट एंड सोशल स्ट्रैटिफिकेशन अमंग द मुस्लिम्स इन इंडिया।* दिल्ली: मनोहर।

अहमद, आई. (2003). *अ डिफरेंट जिहाद: दलित मुस्लिम्स' चैलेंज टू अशराफ हेजेमनी।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *38*(46), 4886–4891।

अहमद, आई. (2007). *रिकग्निशन एंड एंटाइटलमेंट: मुस्लिम कास्ट्स एलिजिबल फॉर इन्क्लूज़न इन द कैटेगरी 'शेड्यूल्ड कास्ट्स'।* कंटेम्पररी पर्सपेक्टिव्स, *1*(2), 89–109।

आलम, ए. (2003). *डेमोक्रेटाइजेशन ऑफ इंडियन मुस्लिम्स: सम रिफ्लेक्शन्स।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *38*(45), 4881–4885।

आलम, ए. (2009). *चैलेंजिंग द अशराफ्स: द पॉलिटिक्स ऑफ पसमांदा मुस्लिम महाज़।* जर्नल ऑफ मुस्लिम माइनॉरिटी अफेयर्स, *29*(2), 171–181।

आलम, ए. (2022). *पसमांदा मूवमेंट्स स्ट्रगल फॉर शेड्यूल्ड कास्ट स्टेटस।* जर्नल ऑफ सोशल इन्क्लूज़न स्टडीज़, *8*(1), 45–62।

इंजीनियर, ए. ए. (1990). *इस्लाम एंड लिबरेशन थियोलॉजी।* नई दिल्ली: स्टर्लिंग।

किम, एच. (2019). *द स्ट्रगल फॉर इक्वैलिटी: इंडियाज़ मुस्लिम्स एंड रीथिंकिंग द यूपीए एक्सपीरियंस।* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

कुमार, ए. (2023). *एक्सक्लूज़न ऑफ पसमांदा मुस्लिम्स एंड दलित क्रिश्चियन्स फ्रॉम द शेड्यूल्ड कास्ट कोटा।* साउथ एशिया रिसर्च, *43*(2), 192–209।

कुमार, एस., प्रशन, एफ., त्रिवेदी, के., एवं गोली, एस. (2020). *बैकवर्ड एंड दलित मुस्लिम्स: एजुकेशन, एम्प्लॉयमेंट एंड पॉवर्टी।* रावत पब्लिकेशन्स।

कुलकर्णी, एस. डी. (2008). *चेंजिंग एजुकेशनल इनइक्वैलिटीज़ इन इंडिया: इन द कॉन्टेक्स्ट ऑफ अफर्मेटिव एक्शन।* डेमोग्राफी, 245–270।

कोठारी, सी. आर., एवं गर्ग, जी. (2018). *रिसर्च मेथडोलॉजी: मेथड्स एंड टेक्नीक्स* (4th एड.). न्यू एज पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड।

क्रेंशॉ, के. (1989). *डीमार्जिनलाइजिंग द इंटरसेक्शन ऑफ रेस एंड सेक्स: अ ब्लैक फेमिनिस्ट क्रिटीक ऑफ एंटीडिस्क्रिमिनेशन डॉक्ट्रिन, फेमिनिस्ट थ्योरी एंड एंटीरेसिस्ट पॉलिटिक्स।* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो लीगल फोरम, *1989*(1), 139–167।

क्रेसवेल, जे. डब्ल्यू. (2009). *रिसर्च डिज़ाइन: क्वालिटेटिव, क्वांटिटेटिव, एंड मिक्स्ड मेथड्स अप्रोचेज* (3rd एड.). सेज पब्लिकेशन्स, इन्कॉरपोरेटेड।

खान, एम. ई. (1976). *मुस्लिम सोशल स्ट्रक्चर इन एन अर्बन सेटिंग: अ केस स्टडी ऑफ कानपुर सिटी।* इंडियन एंथ्रोपोलॉजिस्ट, *6*(1), 28–39।

खान, जे., एवं बुतूल, एफ. (2013). *एजुकेशन एंड डेवलपमेंट ऑफ मुस्लिम्स इन इंडिया: अ कम्पेरेटिव स्टडी।* आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस, *13*, 80–86।

खानम, ए. (2013). *मुस्लिम बैकवर्ड क्लासेज़: अ सोशियोलॉजिकल पर्सपेक्टिव।* नई दिल्ली: सेज।

खालिदी, ओ. (1998). *इंडियन मुस्लिम्स सिंस इंडिपेंडेंस।* विकास पब्लिशिंग हाउस।

गवर्नमेंट ऑफ इंडिया. (1980). *रिपोर्ट ऑफ द बैकवर्ड क्लासेज़ कमीशन (मंडल कमीशन)।* नई दिल्ली: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।

गवर्नमेंट ऑफ इंडिया. (2006). *सोशल, इकोनॉमिक एंड एजुकेशनल स्टेटस ऑफ द मुस्लिम कम्युनिटी ऑफ इंडिया (सच्चर कमेटी रिपोर्ट)।* नई दिल्ली: कैबिनेट सेक्रेटेरिएट।

गुप्ता, डी. (1992). *सोशल स्ट्रैटिफिकेशन।* ऑक्सफोर्ड इन इंडिया रीडिंग्स इन सोशियोलॉजी।

चो, एस., क्रेंशॉ, के. डब्ल्यू., एवं मैक्कॉल, एल. (2013). *टुवर्ड अ फील्ड ऑफ इंटरसेक्शनैलिटी स्टडीज़: थ्योरी, एप्लिकेशन्स, एंड प्रैक्सिस।* साइन्स: जर्नल ऑफ वूमेन इन कल्चर एंड सोसाइटी, *38*(4), 785–810।

चोपड़ा, एस. (2022). *सिस्टरहुड इकोनॉमी: ऑफ, बाय, फॉर वो(मेन)।* इंडिया: एस एंड एस इंडिया।

जसपाल, आर. (2011). *द कास्ट-इंग ऑफ मुस्लिम आइडेंटिटी: इंटरसेक्शन्स ऑफ कास्ट, रिलिजन एंड जेंडर।* साउथ एशियन डायस्पोरा, *3*(1), 61–78।

जाफ्रेलो, सी. (2003). *इंडियाज़ साइलेंट रेवोल्यूशन: द राइज़ ऑफ लो कास्ट्स इन नॉर्थ इंडियन पॉलिटिक्स।* नई दिल्ली: परमानेंट ब्लैक।

जोधका, एस. एस., एवं शाह, जी. (2010). *कम्पेरेटिव कॉन्टेक्स्ट्स ऑफ डिस्क्रिमिनेशन: कास्ट एंड अनटचेबिलिटी इन साउथ एशिया।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *45*(25), 99–106।

ड्यूलॉक, एच. एल. (1993). *रिसर्च डिज़ाइन: डिस्क्रिप्टिव रिसर्च।* जर्नल ऑफ पीडियाट्रिक ऑन्कोलॉजी नर्सिंग, *10*(4), 154–157।

थोराट, एस., एवं न्यूमन, के. (2012). *ब्लॉक्ड बाय कास्ट: इकोनॉमिक डिस्क्रिमिनेशन इन मॉडर्न इंडिया।* नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

दिनेशा, पी. टी. (2016). *सोशियो-इकोनॉमिक स्टेटस ऑफ दलित मुस्लिम्स इन इंडिया: एन ओवरव्यू।* इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल एंड इकोनॉमिक रिसर्च, *6*(2), 145–150।

देशपांडे, एस., एवं बापना, जी. (2008). *दलित्स इन द मुस्लिम एंड क्रिश्चियन कम्युनिटीज़: अ स्टेटस रिपोर्ट ऑन करंट सोशल साइंटिफिक नॉलेज।* नई दिल्ली: इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ दलित स्टडीज़।

देशपांडे, एस., कर्वे, आई., श्रीनिवास, एम. एन., गुप्ता, डी., बेतेइय, ए., कोठारी, आर., ... एवं पांडियन, एम. एस. एस. (2014). *द प्रॉब्लम ऑफ कास्ट।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *49*(41), 17।

देसाई, एस., एवं कुलकर्णी, वी. (2008). *चेंजिंग एजुकेशनल इनइक्वैलिटीज़ इन इंडिया इन द कॉन्टेक्स्ट ऑफ अफर्मेटिव एक्शन।* डेमोग्राफी, *45*(2), 245–270।

द्रेज़, जे., एवं सेन, ए. (2013). *एन अनसर्टेन ग्लोरी: इंडिया एंड इट्स कॉन्ट्राडिक्शन्स।* प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

नरसिम्हन, एस. (2021). *बीइंग दलित, बीइंग मुस्लिम: कास्ट, रिलिजन, एंड द स्टेट इन इंडिया।* सेंट एंटनीज़ इंटरनेशनल रिव्यू, *16*(2), 179–200।

नायर, आर. (2016). *माइनॉरिटी–माइनॉरिटी रिलेशन्स: एन इंटरसेक्शनल इन्वेस्टिगेशन ऑफ दलित–मुस्लिम रिलेशन्स इन इंडिया।* क्लार्क यूनिवर्सिटी।

नूरानी, ए. जी. (संपा.). (2004). *द मुस्लिम्स ऑफ इंडिया: अ डॉक्यूमेंटरी रिकॉर्ड।* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

नेशनल कमीशन फॉर माइनॉरिटीज़. (2008). *रिपोर्ट ऑन द सोशियो-इकोनॉमिक स्टेटस ऑफ माइनॉरिटीज़ इन इंडिया।* गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।

फ़ज़ल, टी. (2013). *कास्ट, रिलिजन एंड जेंडर: इंटरसेक्टिंग आइडेंटिटीज़ ऑफ पसमांदा मुस्लिम विमेन।* जर्नल ऑफ साउथ एशियन डेवलपमेंट, *8*(2), 187–208।

भट्टी, ज़ेड. (1973). *स्टेटस एंड पावर इन अ मुस्लिम डॉमिनेटेड विलेज ऑफ उत्तर प्रदेश।* इन आई. अहमद (संपा.), *कास्ट एंड सोशल स्ट्रैटिफिकेशन अमंग द मुस्लिम्स* (पृ. 89–96). दिल्ली: मनोहर।

मंडल, एस. आर. (2003). *सोशल स्ट्रक्चर। ओबीसीज़ एंड मुस्लिम्स।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *38*(45), 4892–4897।

माइन्स, एम. (1972). *मुस्लिम सोशल स्ट्रैटिफिकेशन इन इंडिया: द बेसिस फॉर वैरिएशन।* यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू मेक्सिको प्रेस, *28*(4), 333–349।

मार्टिन, के. (2023). *वॉटर एंड सैनिटेशन – यूनाइटेड नेशन्स सस्टेनेबल डेवलपमेंट।* यूनाइटेड नेशन्स सस्टेनेबल डेवलपमेंट। रिट्रीव्ड 2 नवंबर, 2023, फ्रॉम: https://www.un.org/sustainabledevelopment/water-and-sanitation/

मुजतबा, ए. डब्ल्यू. (2017). *अस्पायरिंग टू राइजिंग: एजिटेशन ऑफ मुस्लिम 'अदर बैकवर्ड क्लासेज़' इन उत्तर प्रदेश।* इस्लाम एंड मुस्लिम सोसाइटीज़: अ सोशल साइंस जर्नल, *10*(2), 105–126।

रंगनाथ मिश्रा कमेटी रिपोर्ट. (2007). *रिपोर्ट ऑफ द नेशनल कमीशन फॉर रिलिजियस एंड लिंग्विस्टिक माइनॉरिटीज़।* नई दिल्ली: मिनिस्ट्री ऑफ माइनॉरिटी अफेयर्स।

रहमान, ए. (2019). *डिनायल एंड डेप्रिवेशन: इंडियन मुस्लिम्स आफ्टर द सच्चर कमेटी एंड रंगनाथ मिश्रा कमीशन रिपोर्ट्स।* रूटलेज।

रहमान, एफ. (1980). *मेजर थीम्स ऑफ द क़ुरआन।* शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

रियाज़, एम. ज़ेड., एवं रहीमान, एच. वी. (2022). *पसमांदा मुस्लिम्स: अ केस ऑफ डबल वल्नरेबिलिटी।* इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च एंड एनालिटिकल रिव्यूज़ (आईजेआरएआर), *9*(2), 897–904।

रॉबिन्सन, आर. (2008). *रिलिजन, सोशियो-इकोनॉमिक बैकवर्डनेस एंड डिस्क्रिमिनेशन: द केस ऑफ इंडियन मुस्लिम्स।* इंडियन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल रिलेशन्स, *43*(2), 194–200।

रॉबिन्सन, आर. (2014). *माइनॉरिटी राइट्स वर्सेस कास्ट क्लेम्स: इंडियन क्रिश्चियन्स एंड प्रेडिकामेंट्स ऑफ लॉ।* इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, *49*(12), 82–91।

रॉल्स, जे. (1971). *अ थ्योरी ऑफ जस्टिस।* हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ली, जे. (2018). *हू इज़ द ट्रू हलालखोर? जीनियोलॉजी एंड एथिक्स इन दलित मुस्लिम ओरल ट्रेडिशन्स।* कॉन्ट्रिब्यूशन्स टू इंडियन सोशियोलॉजी, *52*(1), 1–27।

शाह, जी. (2020). *इंट्रोडक्शन: एजुकेशन एंड द शेड्यूल्ड कास्ट्स।* इन *एजुकेशन एंड कास्ट इन इंडिया* (पृ. 1–22). रूटलेज इंडिया।

सच्चर कमेटी रिपोर्ट. (2005). *सोशल, इकोनॉमिक एंड एजुकेशनल स्टेटस ऑफ द मुस्लिम कम्युनिटी ऑफ इंडिया।* प्राइम मिनिस्टर्स हाई लेवल कमेटी, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।

सिंह, एम. पी., एवं रॉय, एच. (संपा.). (2011). *इंडियन पॉलिटिकल थॉट: थीम्स एंड थिंकर्स।* पियरसन एजुकेशन इंडिया।

सिकंद, वाई. (2001). *अ न्यू इंडियन मुस्लिम एजेंडा: द दलित मुस्लिम्स एंड द ऑल-इंडिया बैकवर्ड मुस्लिम मोर्चा।* जर्नल ऑफ मुस्लिम माइनॉरिटी अफेयर्स, *21*(2), 287–296।

सिकंद, वाई. (2004). *मुस्लिम्स इन इंडिया: कंटेम्पररी सोशल एंड पॉलिटिकल डिस्कोर्सेज़।* होप इंडिया पब्लिकेशन्स।

सिकंद, वाई. (2005). *इस्लाम, कास्ट एंड दलित–मुस्लिम रिलेशन इन इंडिया।* दिल्ली: ग्लोबल मीडिया पब्लिकेशन्स।

सिकंद, वाई. (2007). *एससी स्टेटस फॉर दलित मुस्लिम्स एंड क्रिश्चियन्स। बेसिक प्रॉब्लम्स ऑफ ओबीसी एंड दलित मुस्लिम्स*, 103–106।

सिद्दीकी, एम. के. ए. (1979). *मुस्लिम्स ऑफ कलकत्ता: अ स्टडी इन आस्पेक्ट्स ऑफ देयर सोशल ऑर्गनाइजेशन।* मेमॉयर।

सिद्दीकी, एम. के. ए. (2004). *मार्जिनल मुस्लिम कम्युनिटीज़ इन इंडिया।*

https://doi.org/10.63960/sp.2026.spheres.1.1.17

इंडिया: इंस्टिट्यूट ऑफ ऑब्जेक्टिव स्टडीज़।

सेंटर फॉर इक्विटी स्टडीज़. (2009). *रिपोर्ट ऑन द सोशल-इकोनॉमिक स्टेटस ऑफ पसमांदा मुस्लिम कम्युनिटीज इन इंडिया*। नई दिल्ली: सेंटर फॉर इक्विटी स्टडीज़।

सेन, ए. (2000). *सोशल एक्सक्लूज़न: कॉन्सेप्ट, एप्लिकेशन, एंड स्क्रूटिनी*। एशियन डेवलपमेंट बैंक।

हट्टन, जे. एच. (1963). *कास्ट इन इंडिया* (वॉल. 40). लंदन: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

हसन, ज़ेड. (2009). *पॉलिटिक्स ऑफ इन्क्लूज़न, कास्ट, माइनॉरिटीज़ एंड अफर्मेटिव एक्शन*। नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

हसनैन, एन. (2007). *मुस्लिम्स इन इंडिया: कास्ट अफिनिटी एंड सोशल बाउंड्रीज़ ऑफ बैकवर्डनेस*। *द ओबीसीज़ एंड द रूलिंग क्लासेज़ इन इंडिया*, 85–97।

Disclaimer/Publisher's Note: The statements, opinions, and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and do not necessarily reflect the views of Synergy Publication or the editor(s) of the journal. While reasonable editorial and peer-review procedures are followed, Synergy Publication and the editor(s) do not endorse any products, methods, or claims described in the content.

Author Bio:

1. इक़रा अफरीन भारतीय राजनीति, सामाजिक न्याय, अल्पसंख्यक अध्ययन, और समकालीन राजनीतिक प्रक्रियाओं में विशेषज्ञता रखने वाली एक विद्वान और अकादमिक हैं। उन्होंने बी.ए. (ऑनर्स.) राजनीति विज्ञान और एम.ए. राजनीति विज्ञान की डिग्री दौलत राम कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण किया। उन्होंने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय दिल्ली, स्कूल ऑफ अंडरग्रेजुएट स्टडीज, राजनीति विज्ञान विभाग में सहायक प्रोफेसर (गेस्ट) के रूप में कार्य किया। उनकी अनुसंधान रुचियों में राजनीतिक प्रतिनिधित्व, सामाजिक न्याय, पसमांदा मुस्लिम अध्ययन, और समकालीन भारत में लोकतांत्रिक शासन शामिल हैं।